नारदस्य वचः श्रुला राजा वचनमत्रवीत्। देवानामश्र धर्मात्मा स्वपचांस्वेव पार्थिवान्।

ग्रुभं वा यदि वा पापं श्राह्मणां स्थानमद्य मे । तदेव प्राप्तुमि ऋामि लेकानन्यास्त कामये।

राज्ञस्य वचनं श्रुला देवराजः पुरन्दरः। श्रानृग्रंस्थममायुक्तं प्रत्युवाच युधिष्ठिरं।

स्थानेऽस्मिन् वस राजेन्द्र कर्माभिनिर्क्तिः ग्रुभैः। किं लं मानृत्यकं स्नेहमद्यापि परिकर्षि।

सिद्धिं प्राप्ताऽसि परमा यथा नान्यः पुमान् कचित्। नैव ते श्रातरः स्थानं संप्राप्ताः कुरनन्दन।

श्रुष्यापि मानृत्रो भावः स्पृत्रते लं। नराधिष। स्रगीऽयं पश्य देवर्षीन् सिद्धां विदिवालयान्।

युधिष्ठिरस्त देवेन्द्रभेवंवादिनमीश्वरं। पुनरेवात्रवीद्धीमानिदं वचनमर्थवत्।

तैर्विना नीत्सहे वस्तुमिह देत्यनिवर्ष्ण। गन्तुमिक्कामि तचाइं यच मे श्रातरो गताः।

यच सा दृहती ग्रह्माम बुद्धिस्त्वगुणान्विता। द्रै।पदी योषिता श्रेष्ठा यच चैव गता मम।

इति श्रीमहाभारते महाप्रसानिके पर्वणि युधिष्ठिरस्वर्गारोहे हृतीयोऽध्यायः॥ ३॥

## ॥ समाप्तश्चेदं महाप्रखानिकपर्व ॥

## श्वन व्यासाकाध्यायस्थानसंख्यान्यूनाधिकाञ्चेसिपिकरप्रमादात्तद्वीधं॥

ा वाराहित ज्ञान में निर्माण के क्ष्मित के क्षिण के क्षार के क्षार के क्ष्मित के क्षार के क्ष्मित के क्ष्मित के क्ष्मित के क्षार के क्ष्मित के क्ष्मित के क्ष्मित के क्ष्मित के क्ष्मित के क्षार के क्ष्मित के क्ष्मित के क्ष्मित के क्ष्मित के क्ष्मित के क्षार के क्ष्मित के क्ष्